कला में सौन्दर्य

शबाहत
अंशकालिक प्रवक्ता,
चित्रकला विभाग,
आर0जी0पी0जी0 कॉलिज,मेरठ।

मानव ने अपने अनुभवों तथा भावनाओं को व्यक्त करने के लिए इशारे, ध्वनि और शब्दों का निर्माण किया। हजारों–हजारों वर्षों में बोली अथवा भाषा का वह स्वरूप बन पाया होगा जो बोला, सुना अथवा पढ़ा जाने योग्य हुआ ऐसे ही आदि काल में प्रकृति के जो रूप मनुष्य ने देखे उनका गहरा प्रभाव उनके मन पर होता गया और प्रकृति के उन रूपों के प्रभाव के परिणामस्वरूप उनके मन में भय, उल्लास, अनुराग, घृणा आदि भाव जागे यद्यपि बोलियों व भाषाओं का विकास सभी क्षेत्रों में एक जैसा नही हुआ और एक क्षेत्र के अधिकांश निवासी दूसरे क्षेत्र के लोगों की भाषा नही समझते किन्तु प्रकृति एवं उसके सौन्दर्य का प्रभाव सभी पर कम या अधिक हुआ हैं। संसार की अनेक वस्तुओं को देखकर इंसान को मजा आता है और वह उसमें रूचि लेता है यह खाने पीने सुनने देखने किसी भी से संबंधित हो सकती हैं। सुन्दर चीजें व्यक्ति को अच्छी लगती हैं। किन्तु कलाकार उसमें पूर्णतः डूब जाता है। उसके मन पर सौन्दर्य का गहरा प्रभाव पड़ता है तथा चित्रकार उस रूप या दृश्य को चित्रित करने लगता है। कवि उस रूप को शब्दों में बाँधने लगता हैं। ऐसा करने से उसे एक सूरत की प्राप्ति होती हैं खाने पीने तथा शारीरिक मूरत के अतिरिक्त व्यक्ति में एक सूरत "सौन्दर्य बोध" की भी होती हैं जो जन्मजात है। किसी भी मधुर ध्वनि को सुनकर उत्साहित होना, किसी नारी अथवा वस्तु के सौन्दर्य में खो जाना, सौन्दर्य की संवेदनशीलता है। सौन्दर्य एक भावना है जिसे हम दैनिक जीवन में अपनी इन्द्रियों के द्वारा देखकर, सुनकर अनुभव करते है। सुन्दर वस्तुओं को इकट्ठा करना या उन्हें दूसरों को दिखाकर खुशी प्राप्त करना यह भी आनन्द का अंग है। व्यक्ति सौन्दर्यबोध की इस जन्मजात प्रवृत्ति से अनभिज्ञ होता हैं। जबकि वह अपने दैनिक जीवन में भी इसका उपयोग करता है। वस्त्र खरीदने, घर को सजाने तथा साज सज्जा की अनेक वस्तुओं के चयन में भी हम इस क्रिया का प्रयोग करते है और उन बहुत सी वस्तुओं में से सुन्दर को ही चुनते है। यदि संसार में ये असुन्दर वस्तुऐं न होती तो सुन्दरता का ज्ञान न होता। और न ही हम उनको पाने की इच्छा ही करते। किसी वस्तु को पाने की इच्छा ही सौन्दर्य बोध है। और यही सौन्दर्य शास्त्र की प्रथम कड़ी हैं। किसी भी सुन्दर वस्तु अथवा व्यक्ति को देखकर अचानक मुख से निकल जाता है कि ओह! कितना सुन्दर है। अथवा ईश्वर ने क्या साँचे में ढ़ाला है। सौन्दर्य के प्रति आकर्षण अथवा उस वस्तु को बनाने वाले कलाकार अथवा ईश्वर के प्रति हम अपने भावों को अभिव्यक्त करते है। वस्तु के सौन्दर्य की उपेक्षा शारीरिक सौन्दर्य को देखकर व्यक्ति अधिक आकर्षित होता है। मानव तो क्या उसे देखकर ऋषि मुनि भी अपनी सुध–बुध खो बैठते हैं। सृष्टिकर्ता ब्रह्मा भी पुत्री सरस्वती के रूप सौन्दर्य के मोह का सम्भरण न कर सकें। सौन्दर्य की आकर्षण शक्ति चुम्कब के सदृश व्यक्ति को अपनी ओर खींचती हैं। और व्यक्ति परवश सा उसकी ओर खींचता चला जाता हैं। यहीं मोह उस सीमा को लाँघकर वासना का रूप ग्रहण कर लेता हैं। प्रकृति अपने छदम रूप द्वारा संतति विकास के उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। और व्यक्ति का सौन्दर्य धीरे धीरे समाप्त होने लगता है। इस प्रकार यह शारीरिक सौन्दर्य सच्चा सौन्दर्य नही हैं। सौन्दर्य की अनुभूति व्यक्ति मुख्यतः दो रूपों में करता हैं। नेत्रों द्वारा सौन्दर्य के दर्शन से व्यक्ति मंद मस्त हो जाता है। अनेक देवी देवताओं का नारी सौन्दर्य की ओर आकर्षित होना तथा अनेक सुन्दिरयों का अपहरण इसी अनुभूति के उदाहरण है। कलाकार इस सौन्दर्य की अनुभूति से प्रेरित होकर सुन्दर चित्र, मूर्ति, गीत, संगीत की रचना करता है।

इस सौन्दर्य की अनुभूति का एक दूसरा पक्ष आन्तरिक अन्तर्दृष्टि है ये इस क्षण भंगुर सौन्दर्य की ओर आकृष्ट नही होते। वे सौन्दर्य को नैतिकता, उच्च विचार त्याग और बलिदान जैसे मूल्यों में देखते है। इसमें सत्य शिवं सुन्दरं की भावना विद्यमान रहती हैं। यहाँ सौन्दर्य आत्मा में रहता हैं। जिसमें सौन्दर्य का बाहरी रंग रूप में न देखकर उसके आंतरिक गुण या भावना में देखते हैं। आन्तरिक सौन्दर्य में उस वस्तु या व्यक्ति का आकार या रूप सुन्दर न होने पर भी उसके गुण, त्याग, बलिदान की भावना या नैतिकता के गुणों के अभाव में आदर्शवादी उसको सुन्दर नही मानते।

प्रकृति सौन्दर्य और कला के सौन्दर्य में कुछ विभिन्नतायें भी होती हैं। प्रकृति का सौन्दर्य विज्ञान की सीमाओं और नियमों का व्यवहार है तथा प्रकृति के गणितीय व्यवहार का उत्पादन है। जो स्वयं क्रियाशीलता का उत्पादन भी है। किन्तु कला का सौन्दर्य प्रकृति के प्रति मानव प्रेम की उपज हैं यह उसकी सहज बुद्धि पर आधारित है यह कई रूपों में हमें दिखाई देता है।

सौन्दर्य तथा ऐस्थेटिक्स को अन्य विषयों की भाँति स्वतन्त्र विषय बनाने का श्रेय अठारहवी शती के जर्मन दार्शनिक बामगार्टन को है। उन्होने सौन्दर्य पर ऐस्थेटिक्स नाम से लैटिन भाषा में एक विशाल ग्रंथ लिखा। तभी से सौन्दर्य ऐस्थेटिक्स के नाम से एक विषय बन गया। ऐस्थेटिक्स मूल ग्रीक शब्द ऐस्थेटिकोस या

ऐस्थेसिस से निकला है। जिसका अर्थ है ऐन्द्रिय अनुभूति अर्थात् सैन्स पर्सेप्शन।

दर्शन शास्त्र में ऐस्थेटिक्स में कला तथा प्रकृति में सौन्दर्य शास्त्र की विवेचना होती है। वामगार्टन के प्रयास के फलस्वरूप इसके अध्ययन का क्षेत्र सौन्दर्य और कला का सृजन है। सौन्दर्य क्या है क्यो है तथा यह किसलिए होता है। मानव जीवन में इसका क्या महत्व है। इस प्रकार के अनेक प्रश्नों के उत्तर हमें ऐस्थेटिक्स से प्राप्त होते है। इसी आधार पर अब कला सौन्दर्य सम्बन्धी अनेक पक्षों के अध्ययन से इसका अधिक विस्तार हो गया है।

वामगार्टन ने फिलासॅफी को लॉजिक (तर्कशास्त्र) एथिटस को (नीतिशास्त्र) तथा ऐस्थेटिक्स (सौन्दर्यशास्त्र) को तीन अलग–अलग भागों में विभक्त कर दिया। नीतिशास्त्र में मनुष्य को बुराईयों से अच्छाइयों की ओर ले जाने का अध्ययन है। लॉजिक तर्क की ओर ले जाता है तथा सौन्दर्य शास्त्र आनन्द की ओर ले जाता है। इसी प्रयास के कारण वामगार्टन को ऐस्थेटिक्स का जनक कहा जाता है। सौन्दर्य शास्त्र को चित्र, मूर्ति संगीत आदि ललित कलाओं में उच्च स्तरीय अध्ययन का अंग माना जाता हैं सौन्दर्य शास्त्र के अन्तर्गत सौन्दर्य, कला और अभिरूचि इन तीनों का विशेष अध्ययन किया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य अनेकों दार्शनिक पक्षों का अध्ययन भी इसके अर्न्तगत किया जाता है। कला के आधार पर कलाओं के परस्पर सम्बन्ध विभिन्न कला शैलियों के अध्ययन, कला के इतिहास सम्बन्धी सिद्धान्त का अध्ययन किया जाता है।

अनुकृति मूलक कला में कलाकार प्रकृति के प्रभाव से उसके रूप को ज्यों काव्यों चित्रित करता हैं। जिसे हम प्रकृति की प्रतिकृति कहते है। जब कलाकार केवल प्रकृति की अनुकृति न करके उसमें संयोजन, प्रभाव तथा भाव आदि को लेकर रूप देता हैं। जिसका कोई अर्थ, आदर्श होता हैं। यह आदर्श आकृति मूलक कला होती हैं। समाज के सुन्दर, असुन्दर, शिव अशिव रूप को जब कलाकार विभिन्न माध्यमों के प्रयोग से करता है। उसे सामग्री मूलक कला कहेगें। इसमें उस माध्यम का प्रयोग ही उसके सौन्दर्य के स्तर का निर्धारण करता है इस सौन्दर्य का सीधा सम्बन्ध इन्द्रिय बोध से होता है। कलाओं कलाओं के इन्द्रिय बोधगत सौन्दर्य के विषय में बात महत्वपूर्ण है कि चित्र, मूर्ति, वास्तु तथा संगीत के इन्द्रिय बोध से काव्य का इन्द्रिय बोध से काव्य का इन्द्रिय बोध से काव्य का इन्द्रिय बोध से काव्य का इन्द्रिय बोध भिन्न होता हैं। क्योकि वह ध्वनियों, रंग, आकार पर आश्रित न होकर काव्य की भाषा के अर्थ बोध पर ही आधारित होता है। किसी भी कृति का आन्तरिक और बाहय दोनो ही समन्वय उसकी श्रेष्ठता को प्रतिपादित करता है। जो कलाकार भाव, शिल्प और आनन्द पक्ष के समन्वय को लेकर रचना करते हैं। वही कृति उत्तम होती हैं और मानव उसका रसपान करके आलाप्ति होता है। सच्ची कला के सुन्दर उदाहरण अजन्ता की गुफाओं के चित्रों तथा यूनानी मूर्तियों में दिखाई देते हैं। जो वर्षों के पश्चात् भी आज आर्कषण की कसौटी पर खरे उतरते है। और अमरत्व को प्राप्त हुए है। किसी भी कलाकृति का जन्म अनुभव के आधार पर होता हैं। दैविक शक्ति के धारण करने पर उन अनुभवों को कलाकार एक चमत्कारिक कृति को जन्म देता है। जैसे वर्षों की एक साधारण बूँद से कीमती मोती की उत्पत्ति होती है। उसी प्रकार दृश्य जगत से प्राप्त अनुभवों में से कुछ विशिष्ट अनुभवों के चयन को कलाकार का प्रेम व्यापार कहा जा सकता है। कलाकार अपनी चाक्षुष क्रिया से दृश्य जगत में जो देखता है उसके प्रति प्रत्येक चित्रकार, मूर्तिकार, गीतकार एक ही क्रिया करते हैं। रंगों, आकारों, स्वरों को अनुपात में लवलीन वह अपनी प्रिय वस्तु के सान्दर्य में मूल दृश्य जगत से अलग हो जाता है। और उस वस्तु के प्रेम से सम्मोहित हुआ कार्य करता है। और कलाकार की इस क्रिया का परिणाम ही उसकी कृति होती है। कलाकार की अनुभूति का महत्व समझकर इस दृश्य जगत की अवहेलना नही की जा सकती क्योकि ह्रदय भी स्वयं में पूर्ण नही कहा जा सकता। दृश्य जगत के उपादानों में कोई न कोई गुज अवश्य ऐसा विद्यमान है जो न केवल रूप है न रंग है और अपनी और आकर्षित करता है। कलाकार अपनी कृति में इस सौन्दर्य को प्रस्तुत करके सुख और आनन्द अनुभव करता है। इसके साथ ही वह यह भी चाहता है कि दूसरे लोग भी इस सौन्दर्य का रसास्वादन करें और उस रूप के लिए भी कहा गया है। गायक मधुर वाणी में गीत सुनाकर दूसरों को आनन्दित करना चाहता हैं। चित्रकार अपने चित्रों की प्रदर्शनियॉ इसलिए करता है क्योकि वह यह चाहता है कि लोग उसके कौशल को देखकर उसकी सराहना करें तथा स्वयं भी आनन्दित हो। दूसरों के आनन्द प्राप्त करने और प्रशंसा करने से कलाकार का उत्साह बढता हैं। किसी गायक के गीत सुनकर तथा अभिनेता के अभिनय को देखकर बजने वाली प्रशंसात्मक तालियों उस कलाकार के अन्दर एक उत्साह भर देती है। तब वह और भी लगन तथा विश्वास से उस कार्य को और अधिक अच्छा करता है। इसी प्रकार चित्रकार के चित्रों की प्रशंसा करके चित्रण में और निखार उत्पन्न कर देती है। कलाकार कलाकृति और रसिक इन तीनों का एक विशिष्ट नाता है। भले ही उनका सम्बन्ध सीधा नही है तथा रसिक का उस कृति के सृजन में कोई योगदान नही होता। इसको मनोवैज्ञानिक आधार कह सकते है। कला में सौन्दर्य सर्वत्र व्याप्त है।